

पशु व मत्स्य पालन

1. महत्त्व

कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था में पशु पालन कृषक की आय बढ़ाने का एक प्रमुख साधन है। राज्य की जलवायु भी पशुपालन के लिए अति उत्तम है। राज्य के कुल वार्षिक उत्पाद में पशु पालन का भाग 12 प्रतिशत है, जो समस्त भारत के औसत से दो गुणा है। पशु पालन कम ऊंचे भागों में सहायक व्यवसाय के रूप में अपनाया जाता है, जबकि किन्नौर, लाहौर या पांगी-भरमौर जैसे दूर दराज के क्षेत्रों में यह मुख्य व्यवसाय है।

(अ) पशु पालन कृषि का अभिन्न अंग : राज्य की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है। चोटें, चोटें, बिखरी व पट्टियों की शकल में है। सिंचाई की सुविधा बहुत कम है। अतः आधुनिक मशीनों की जगह पशु ही कृषि कार्य करते हैं। परिवार के सभी व्यक्तियों को वर्ष भर कार्य नहीं मिलता। पशु-पालन कृषक परिवार को काम के अतिरिक्त अवसर जुटाकर उसकी आय बढ़ाने में सहायक होता है। पशुओं का मल-मूत्र खाद के काम आता है। पशुओं से हमें दूध, घी, छाछ, अंडे व मांस प्राप्त होता है। साथ ही सर्दियों के लिए ऊन। पशुओं की इतनी अइधक उपयोगिता के कारण ही राज्य की 91.5 प्रतिशत जनसंख्या पशु-पालन में लगी है। पशुओं के बिना किसान का जीवन अधूरा है।

(ब) मुख्य व्यवसाय के रूप में : अधिक ऊंचे व ठण्डे प्रदेश कृषि के अनुकूल नहीं। वहाँ चारा काफी है, आबादी कम है। अतः लोगों का मुख्य व्यवसाय भेड़, बकरी पालन है। ये लोग अपने पशुओं के साथ गर्मियों में ऊंचे भागों की ओर तथा सर्दियों में निचले भागों की ओर चल पड़ते हैं।

2. पशुओं की संख्या

1982 की गणना के अनुसार राज्य में विभिन्न प्रजातियों के कुल पशुओं की संख्या 51 लाख से अधिक थी। इस प्रकार प्रति वर्ग किलोमीटर में 92 पशुओं का औसत है। जबकि इसी अवधि में मानव जनसंख्या का घनत्व 77 था। दूसरे शब्दों में राज्य में पशुओं की संख्या लोगों से अधिक है। पशुओं के लिए चरागाह का क्षेत्र प्रति पशु 0.19 हैक्टेयर है। कुक्कटों की संख्या 4.61 लाख थी। गौवंशी पशु सबसे अधिक थे। भेड़ों का स्थान दूसरा था। विभिन्न प्रकार के पशुओं की संख्या निम्न तालिका में दी गई है।

क्र०सं०	पशुओं की प्रजातियां	संख्या (लाखों में)
1.	गौ वंशीय	21.7
2.	भैंस वंशीय	6.2
3.	भेड़	10.9
4.	बकरी	10.6
5.	कुत्ते	1.35
6.	अन्य	0.48
7.	कुल पशु धन	51.23

स्रोत : पशु गणना, भू-आलेख निदेशालय, हिमाचल प्रदेश

ऊँचे से ठण्डे भागों में गाय भैंस की तुलना में भेड़-बकरियाँ अधिक संख्या में पाली जाती हैं। इसके विपरीत कम ऊँचे भागों में जहाँ कृषि मुख्य व्यवसाय है, गाय-भैंसों की संख्या भेड़-बकरियाँ से अधिक है। मध्य वर्तीय भागों दोनों ही किस्म के पशु पाले जाते हैं। कांगड़ा जिले में गौ-वंशीय पशुओं की संख्या सर्वाधिक थी। इसके विपरीत चम्बा में भेड़ बकरियाँ तीन गुणा अधिक थी जबकि लाहौल में भेड़ बकरियों की संख्या गौवंशी पशुओं की तुलना में सात गुणा अधिक थी।

3. मुख्य समस्याएं

हिमाचल में गाय छोटी व कमजोर होती है। अधिक संख्या के कारण पर्याप्त चारा भी नहीं मिलता। कृषक के लिए गाय का महत्त्व दूध की तुलना में बछड़ा व खाद के कारण अधिक है। गाय प्रतिदिन आधा लीटर से 1 लीटर दूध देती है। जो बहुत कम है। भेड़ भी देशी नस्ल की है, अतः अन्न व मांस की उपज अन्य देशों की अपेक्षा बहुत कम है। पशु बहुत-सी छूत की बीमारियों के कारण मर जाते हैं। संक्षेप में कम उत्पादकता, चारे की कमी व बीमारियों का प्रकोप पशु पालन की मुख्य समस्याएं हैं।

4. सरकार के प्रयास (अ) उत्पादकता में वृद्धि

(1) गोजातीय विकास : गायों से दूध की उत्पादकता बढ़ाने के लिए नस्ल सुधार कार्यक्रम पर विशेष जोर दिया जा रहा है। इसके लिए दोगली जाति के प्रजनन व कृत्रिम गर्भाधान की सुविधायें व्यापक स्तर पर प्रदान की जा रही हैं। दोगली जाति के प्रजनन के लिए जर्सी नस्ल को सब जातियों से अच्छा माना गया है। इसलिए पहाड़ी गायों का जर्म प्लाजम वाली जर्सी से प्रजनन कराया जाता है। भैंसों के मामलों में मुराह नस्ल को दोगली जाति के लिए चुना गया है। कुल्लू, किन्नौर व लाहौल स्पिति जिलों को छोड़कर शेष सभी जिलों में जमे हुए वीर्य से कृत्रिम गर्भाधान की सुविधा प्रदान की जा रही है। जिन भागों में इसकी नियमित आपूर्ति नहीं की जा सकती वहां सांड केन्द्र खोले गये हैं। जहां प्राकृतिक ढंग से गर्भाधान कराया जाता है। वर्ष 1991-92 में लगभग 2 लाख गाय व 30,000 भैंसों को कृत्रिम गर्भाधान कराया गया जबकि प्राकृतिक गर्भाधान सिर्फ 10500 पशुओं का हुआ। कृत्रिम गर्भाधान को लोकप्रिय बनाने के लिए ग्राम सम्वर्धन योजना, पहाड़ी पशु विकास कार्यक्रम, सघन जातीय विकास परियोजना चालू की गई। जिन भागों में कोई भी परियोजना नहीं थी वहां कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र खोले गये हैं। सारे राज्य में चिकित्सालय व औषधालयों समेत 620 केन्द्रों में यह सुविधा कृषकों को प्रदान की जा रही है।

साथ ही राज्य में शुद्ध व अच्छी नस्ल के सांडों की आवश्यकता को पूरा करने के लिए पांच गोजातीय पशु प्रजनन फार्म क्रमशः कमान्द व भंगरोटू (मण्डी जिला), कोठीपुरा (बिलासपुर), पालमपुर (कांगड़ा) व वागथन (सिरमौर) में कार्यरत है। 1991 में सांडों की संख्या 339 थी। जिन भागों में सरकारी सांड केन्द्र नहीं वहां सरकार निजी व्यक्तियों को सांड रखने के लिए सहायता व अनुदान प्रदान करती है।

उपरोक्त कार्यक्रमों के फलस्वरूप सातवीं योजना के पांच वर्षों में दूध की पैदावार 1985 में 3.85 लाख टन से बढ़कर 1991-92 में 6.0 लाख टन हो जाने की आशा है।

2. भेड़ प्रजनन व ऊन विकास : राज्य में लगभग 11 लाख भेड़ वंशी पशु हैं। भेड़ पालने का काम दो स्तरों पर किया जाता है। कुछ लोग विशेषकर कांगड़ा, हमीरपुर आदि जिलों में इसे मिश्रित कृषि के रूप में करते हैं। ये लोग अपनी पारिवारिक आवश्यकता को पूरी करने के लिए थोड़ी-सी भेड़ें पालते हैं। दूसरी कोटि में वे लोग हैं जो ऊन के लिए भेड़ों को पालते हैं तथा अपने पशुओं के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते रहते हैं। राज्य में भेड़ों की दो पहाड़ी नस्लें हैं - गद्दी व रामपुर बुशहरी। नस्ल की भेड़ों की ऊन घटिया व खुरखुरी होती है और प्रायः कम्बल व पट्टू बनाने के काम आती है। हिमाचल

प्रदेश की जलवायु उत्तम किस्म की भेड़ों को पालने के लिए अनुकूल है। अतः भेड़ों की नस्ल सुधारने के लिए मैरीनो नस्ल की भेड़ से दोगली जाति का प्रजनन कराया जाता है। ऐसी भेड़ पहाड़ी नस्ल की भेड़ से तीन गुणा अधिक ऊन देती है। अतः सातवीं योजना में विदेशों से 300 मैरीनों भेड़ें आयात करने का प्रावधान रखा गया था। उन्नत किस्म की दोगली भेड़ के प्रजनन के लिए सरकारी भेड़ प्रजनन फार्म ज्यूरी (शिमला), सरोल (चम्बा), नगंवाई (मण्डी), ताल (हमीरपुर), कड़छम (किन्नौर) में कार्यरत हैं। ये राज्य में किसानों को उन्नत भेड़ें देते हैं। चार भेड़ प्रजनन केन्द्र कोठीकोहर (कांगड़ा) स्वाद (मण्डी), वागीपुल (कुल्लू) तथा डोडराक्बार (शिमला) में कार्यरत हैं।

भेड़ों के विकास के लिए विशेष पशु परियोजना के अन्तर्गत छोटे व सीमान्त किसानों व कृषि मजदूरों में कम दर पर ऋण प्रदान करने की योजना सिरमौर में चलाई जा रही है। इसके अतिरिक्त सघन भेड़ विकास कार्यक्रम जो चम्बा जिले की भरमौर व भटियाल तहसीलों में लागू है, के अन्तर्गत भेड़ पालकों को उन्नत किस्म की भेड़ें दी जाती हैं।

इन प्रयासों के फलस्वरूप ऊन का उत्पादन 1985 में 12.65 लाख किलोग्राम से बढ़कर 1991-92 में 15.7 लाख कि०ग्रा० हो जाने की सम्भावना है।

(3) कुक्कट विकास : राज्य में सुधरी किस्म के कुक्कट पक्षी वितरित करने तथा अण्डों से बच्चे निकालने के लिए 14 कुक्कट फार्म/केन्द्र कार्य कर रहे हैं। राज्य में 1977 में 3.3 लाख कुक्कट प्रजाति के पक्षी थे। ये 1982 में बढ़कर 4.6 लाख हो गये। कुक्कट पालन को बड़े स्तर पर स्वीकार किया जा रहा है तथा बढ़ाने के उद्देश्य से कुटीर उद्योग के रूप में लोकप्रियता प्राप्त हो रही है। भोजन में पौष्टिकता बढ़ाने के लिए लोग शौक से अंडों का प्रयोग करते हैं। विशेष पशुधन (कुक्कट) उत्पादन कार्यक्रम के अन्तर्गत, शिमला, बिलासपुर व ऊना जिलों में केन्द्रीय सरकार की वित्तीय सहायता से लघु व सीमान्त किसानों के लाभ के लिए वर्ष 1989-90 में 100 कुक्कट इकाइयां स्थापित करने का लक्ष्य रखा गया है। वर्ष 1991-92 में राज्य लगभग 7.6 लाख अण्डों व 2.6 लाख चूजों का उत्पादन हुआ लगभग 4 लाख अण्डे खाने के लिए बेचे गये।

(ब) बीमारियों की रोकथाम व उपचार

वर्ष 1989-90 से राज्य में पशु चिकित्सा व छूत के रोगों की रोकथाम के लिए 827 चिकित्सालय व औषधालय कार्य कर रहे थे। इनके अतिरिक्त 14 चलते फिरते औषधालय भी थे जो महामारी को फैलाने से रोकने के अलावा पशु चिकित्सा सुविधा शीघ्र पहुंचाते हैं। राज्य में 4 क्लीनिक प्रयोग शालायाँ भी कार्यरत हैं। रोगों की जांच के लिए एक संनिरीक्षण इकाई भी कार्य कर रही है। रिडरपैस्ट नामक छूत की बीमारी के रोकथाम के लिए 4 चैकपोस्ट पंडोंगा तथा मांदली (ऊना जिला), स्वार घाट (बिलासपुर) तथा मिलवां (कांगड़ा) में कार्यरत हैं।

सन् 1990 तक राज्य में 60 वर्ग कि०मी० क्षेत्र में 1 पशु चिकित्सालय औषधालय खोलने का लक्ष्य रखा गया था। हिमाचल पहाड़ी राज्य है अतः यहां पशु संसाधनों की संख्या को पशुओं की संख्या से नहीं जोड़ा जा सकता। इसके विपरीत पशु कितनी दूरी से संस्था में पहुंचे, को मानदण्ड माना गया है। राज्य में औसतन एक लाख पशुओं के लिए 15 संस्थायेँ थी जबकि कम आबादी व अधिक क्षेत्रफल वाले जिलों किन्नौर व लाहौल स्पिति में यह संख्या क्रमशः 40 व 41 है। आगामी वर्षों में और अधिक संस्थायेँ खोली जायेँगी ताकि किसानों को थोड़ी दूरी पर ही इलाज की सुविधा प्राप्त हो सके। 1991-92 में लगभग 14 लाख पशुओं का अस्पताल में घर पर इलाज किया गया। 35 हजार टीके लगाये गये। लगभग 1 लाख पशुओं का वंध्याकरण किया गया।

(स) पशु आहार व चरागाह

उच्च वर्ग के पशुओं का उत्पादन व संरक्षण, उचित मात्रा में पौष्टिक पशु आहार व उन्नत चरागाहों की उपलब्धता पर निर्भर है। राज्य में चरागाहों व घासनियों तथा बीजों के विकास व वितरण और उन्नति के कार्य पर सरकार अपना ध्यान केन्द्रित कर रही है। अच्छी किस्म की घास का पौधा किसानों व बगीचे वालों को कम मूल्य पर दिया जा रहा है सरकार ने इस कार्य की जिम्मेदारी वन विभाग व कृषि विभाग को सौंपी है। परन्तु इनमें समन्वय का अभाव है जिससे कार्य में वांछित उन्नति नहीं हो पाई। अतः अब चारा, चरागाह व घासनियों के विकास के समन्वय का कार्य पशु पालन विभाग को सौंपा गया है। पशु आहार तैयार करने की एक इकाई नूरपुर (जाछ) में कार्यरत है।

1985 में राज्य में चारा बीज पैदा करने वाले 3 फार्म काम कर रहे थे। इनका उत्पादन 180 क्विंटल बीज था इसे सातवीं योजना में बढ़ाकर 350 क्विंटल किया जायेगा। साथ ही 200 किलोग्राम छोटी घास के बीज भी तैयार किए जाएंगे।

(द) अन्य नये प्रयोग

(1) मांस के उत्पादन को बढ़ाने के लिए खरगोश पालन की एक इकाई खोली गई थी। इसका विस्तार किया जा रहा है। छोटे व सीमान्त किसानों को खरगोश की खुराक व पिंजरे खरीदने के लिए सहायता अनुदान दिया जा रहा है।

(2) पशमीना बकरी पालने के लिए एक केन्द्र स्थापित करने के प्रयास किए जा रहे हैं। किन्नौर में छिटकुल में याक बैल के पालने के लिए एक ढांचा खड़ा किया गया है। 1972 की गणना में याकों की संख्या 4,589 थी जो 1982 में घटकर 3,495 रह गई, यह पशु प्रायः तिब्बत में पाया जाता है तथा बहुत प्रकार से उपयोगी है। किन्नौर में याक के प्रजनन का काम शुरू किया गया है।

(5) डेयरी विकास

हिमाचल प्रदेश में पशु पालन का मुख्य उद्देश्य कृषि कार्य के लिए बैलों की उपलब्धता तथा खाद की आपूर्ति रहा जबकि दूध का उत्पादन उद्देश्य रहा। दूध उत्पादन को लाभकारी उद्यम के रूप में थोड़े समय पहले ही शुरू किया गया। शहरों की आबादी बढ़ने से वहां दूध की मांग बढ़ी। तब गांवों से दूध इकट्ठा कर शहरों में पहुंचाने का कार्य शुरू हुआ। तीसरी योजना की अवधि में सरकार ने यह कार्य स्वयं सम्भाला। तीसरी योजना में डेयरी विकास पर मात्र 12 लाख रुपये खर्च हुए जबकि छठी योजना में 445 लाख रुपये खर्च होने का अनुमान था।

डेयरी उद्यम में बड़ी मात्रा में पूंजी विनियोग के फलस्वरूप राज्य में मण्डी, नाहन, शिमला, कांगड़ा, चम्बा, नाथपा, झाकड़ी, बिलासपुर व कुल्लू में दूध आपूर्ति योजनाएं शुरू हुईं। 1979 में हिमाचल प्रदेश राज्य सहकारी दुग्ध उत्पादक संघ को शिमला, मण्डी, नाहन व बिलासपुर को योजनाएं सौंप दी गईं। कांगड़ा, चम्बा, नाथपा, झाकड़ी की योजनाएं पशु पालन विभाग के अधीन काम कर रही हैं।

परिणामस्वरूप 1991-92 में राज्य में गाय, भैंस व बकरी के दूध का कुल उत्पादन 6.00 लाख टन हुआ व दुग्ध वितरण योजना में विभाग द्वारा 18 लाख दूध इकट्ठा किया गया। अभी भी राज्य के भीतरी भागों में आवागमन के सुगम साधन उपलब्ध नहीं हैं। अतः उत्पादन के उन केन्द्रों तक दूध इकट्ठा करने जाना कठिन व असम्भव है। चूंकि राज्य में गोवंशी पशुओं की संख्या में तेजी से विस्तार हो रहा है फलस्वरूप दूध का उत्पादन भी बढ़ेगा।

अतः उस दूध के विपणन की समुचित व्यवस्था करना आवश्यक है ताकि उत्पादक को दूध का लाभकारी मूल्य मिल सके व शहरों में उपभोक्ताओं को उचित कीमत पर अच्छा दूध मिल सके।

राज्य सरकार का प्रयास है कि यथासम्भव दूध को तरल रूप में ही बेचा जाए। बिना बिके दूध को ही पाऊंडर बनाया जाये। साथ ही समन्वित ग्रामीण विकास योजना के माध्यम से लघु व सीमान्त किसानों को, भूमिहीन मजदूरों व जन-जातीय लोगों को इस कार्य के लिए कम ब्याज की दर पर ऋण उपलब्ध कराया जा सके। अनुसूचित जाति के लोगों को पशु आहार खरीदने व दूध लाने ले जाने के लिए बर्तनों पर सहायता अनुदान दिया जा रहा है।

हिमाचल प्रदेश में मछली पालन

महत्त्व : हिमाचल प्रदेश में मछली पालन कार्य का राज्य व राष्ट्र दोनों के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण स्थान है। जनसंख्या की लगातार वृद्धि खाद्य पदार्थों की बढ़ती हुई मांग को एक सीमा तक पूरा करने व पशु जन्म प्रोटीन प्रदान करके भोजन की गुणवत्ता बढ़ाने में मछली पालन महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसके साथ ही समाज के अनपढ़ व गरीब वर्ग को रोजगार उपलब्ध कराने में भी योगदान दे रहा है।

देश में मछलियों की मांग : अहमदाबाद स्थित भारतीय प्रबन्ध संस्थान द्वारा किये गये अध्ययन से ज्ञात होता है कि सन् 2000 तक सारे देश में मछलियों की मांग लगभग 125 से 2000 लाख टन तक होगी। इस मांग को समुद्री क्षेत्र से पकड़ी गई मछलियों से लगभग 50 प्रतिशत ही पूरा किया जा सकता है। अतः शेष 50 प्रतिशत मछलियों की आपूर्ति, देश के अन्दरूनी जल स्रोतों से पकड़ी गई मछलियों द्वारा ही पूरी की जा सकती है।

हिमाचल प्रदेश की भूमिका : भारत की मछली की मांग को हिमाचल प्रदेश पूरा करने की क्षमता रखता है। अन्दरूनी भागों से 50 से 100 लाख टन मछलियों की मांग है। हिमाचल प्रदेश इसके एक बड़े भाग को पूरा कर सकता है। 1948 में मछलियों का उत्पादन 200 मी० टन था जो 40 वर्षों में बढ़कर 4300 मी० टन हो गया। इस तरह मछली उत्पादन में 21.5 गुणा वृद्धि हुई है।

सम्भावना : हिमाचल प्रदेश का सारा भाग पहाड़ी है। मछली पालन के विचार से राज्य को दो भागों में बांटा जाता है—(i) निचला पहाड़ी क्षेत्र (ii) मध्यम पहाड़ी क्षेत्र।

(i) निचला पहाड़ी क्षेत्र : यह क्षेत्र शिवालिक शृंखलाओं में पठानकोट से लेकर दक्षिण पूर्व में दून घाटी तक फैला हुआ है। इस क्षेत्र की ऊंचाई 300 मीटर से 1500 मीटर है। इस भाग में महशीर, गिड़ व बाखेल प्रजाति की मछलियां पाई जाती हैं। इन प्रजाति की मछलियोंको आर्थिक आधार पर तालाबों में नहीं पाला जा सकता। सौभाग्य से राज्य में मानव निर्मित दो झीलें – गोविन्द सागर व पोंग बांध इसी भाग में हैं। अतः इनमें पाली जाने वाली मछलियोंकी सम्भावना इस भाग में बहुत अधिक है।

(ii) मध्यम पहाड़ी क्षेत्र : इस क्षेत्र की ऊंचाई 1500 मीटर से ऊपर है। इस भाग में हिमपोषित वर्ष भर बहने वाली बहुत-सी नदियां, खड्ड व नाले हैं। यह भाग ट्राउट प्रजाति की मछलियों के लिए अति उत्तम है। इसके साथ ही इनमें मछली पकड़ने का पर्यटन शौक भी पूरा किया जा सकता है।

क्षमता : राज्य में बहने वाली नदियां, नाले, खड्ड, जलाशय व तालाब आदि मछली पालने के स्रोत हैं। अतः हिमाचल प्रदेश में बहने वाली पांचों नदियां तथा चन्द्रभागा रावी, ब्यास, सतलुज व यमुना तथा उनकी सहायक नदियां, नदी जन्म मछली पालन के स्रोत हैं। इनकी लम्बाई लगभग 300 कि०मी० है। इसमें से 600 कि०मी० की लम्बाई (जो नदियों के ऊपरी भाग में है) ट्राउट क्षेत्र तथा शेष 2400 कि०मी० की लम्बाई ब्रीम या घाटी क्षेत्र है। इसी दूसरे भाग में पोंग बांध व गोविन्द सागर के विशाल जलाशय हैं। इन

दनों जलाशयों की कुल क्षेत्र 40.000 हैक्टेयर है, जो हिमाचल में मछली पालन के विशेष महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं।

हिमाचल में मछली पालन का विकास

अप्रैल 1948 में हिमाचल प्रदेश के गठन से पहले रियासतों में सिर्फ मण्डी में ही मछली पालन का काम संगठित रूप से चल रहा था। यहां जोगिन्द्र नगर से अपरवरोट से ट्राउट मछली पालन का केन्द्र था। अतः पहली योजना शुरू होने पर पहला काम संगठित रूप से सम्बन्धित आंकड़े इकट्ठा करना व मछलियों की सुरक्षा के नियमों का निर्धारण करना था। 1950-51 में राज्य में सिर्फ 200 टन मछली का उत्पादन था। राज्य के जलाशयों में लगभग 98 किस्म की प्रजातियां हैं। इनमें इण्डियन मेजर व माइनर कार्पस, कैटफिशिज, कोविटाईड, ट्राउट, कार्व माइटी महशीर, सनोट्राउट व पहाड़ी ट्राउट प्रमुख प्रजातियां हैं।

राज्य में मछली पालन के स्रोतों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। (1) ऊपरी पहाड़ी क्षेत्र में नदी, नालों के बहते जल में इसे नदीय क्षेत्र कहा जाता है। (2) दूसरा जलाशयों में। इसमें गोविन्द सागर झील बिलासपुर तथा तलवाड़ा के समीप पोंग बांध झील। मछली पालन का मुख्य क्षेत्र यही है। तीसरा पर्यटकों के मनो विनोद हेतु। गत 40 वर्षों में राज्य में बीस गुणा वृद्धि हुई है।

मछली का बीज : मछली पालन में विस्तार करने के लिए पहली आवश्यकता मछली का बीज तैयार करना था। विभिन्न योजना कालों में लगातार बीज फार्मों का निर्माण हुआ और मछली उत्पादन में तीव्र गति से वृद्धि हुई। इस समय राज्य में ट्राउन से भिन्न किस्म की मछलियों के बीज के लिए चार सरकारी फार्म देवली, नालागढ़, आलसू व कांगड़ा में स्थित हैं। ये सभी 150 लाख बीज तैयार कर रहे हैं। केन्द्रीय सरकार ने मिलवां में मछली का बीज तैयार करने वाला फार्म स्थापित किया है। इसमें 5.77 लाख फ्राई फिश का बीज तैयार किया जाता है बहुत छोटे बीज को फ्राई कहा जाता है। जब ये करीब एक अंगुल जितनी बड़ी हो तो उस बीज को फिंगरलिंग कहा जाता है। इनकी संख्या के बढ़ाने के काम को कल्चर कहा जाता है। ट्राउन का बीज कटराई (कुलू), वरोटा (मण्डी), चिरगांव (रोहटू), सागली, नागनी व भान्डेल के फार्मों में तैयार किया जा रहा है। 1990 में 155 लाख फिंगरलिंग व 512 लाख फ्राई फिश बीज की आवश्यकता थी। अतः अभी और कई फार्म स्थापित करने होंगे ताकि मछली के बीज की आपूर्ति की जा सके। वर्ष 1991-92 में 2.5 करोड़ मछली का बीज पैदा किया गया।

विपणन : मछली पकड़ने व बेचने के कार्य को विपणन कहा जाता है। मछली पालन के प्रमुख श्री गोविन्द सागर व पोंग बांध झील में ये कार्य नियमित कर दिया गया है। मछलियों की सरकारी समितियां बना दी गई हैं। यही लोग इन जलाशयों में मछली पकड़ सकते हैं बेच सकते हैं। 1952 में 1300 मछलियारे थे जो 1991-92 में बढ़कर 13000 हो गए हैं। रायल्टी लेती है जो मछलियों की कीमत का 10 से 15 प्रतिशत होती है। दूसरे मछलियारों की आर्थिक दशा में भी सुधार हुआ है और साथ ही साथ राज्य सरकार की आय भी बड़ी है।

प्रति हैक्टेयर पैदावार : अखिल भारतीय स्तर पर एक हैक्टेयर जल क्षेत्र में औसतन 14 किलो मछली पकड़ी जाती है परन्तु गोविन्द सागर में मछली उत्पादन सारे देश से बहुत अधिक है। यहां 80 किलो मछली प्रति हैक्टेयर क्षेत्र से निकाला जाता है। पोंग बांध जलाशय में प्रबन्ध में सुधार के बाद प्रति इकाई उत्पादन गोविन्द सागर के बराबर या इससे भी अधिक होने की आशा है।

उत्पादन : उत्पादन 1950-51 में 200 मी० टन था जो 1991-92 में बढ़कर 5800 मी० टन हो गया है। आगामी दशक में इसमें दस गुणा वृद्धि होने की सम्भावना है।

अभ्यास-प्रश्न

निबन्धात्मक प्रश्न

- (1) हिमाचल में पशु पालन का महत्त्व बताते हुए डेयरी विकास पर प्रकाश डालिए।
- (2) सरकार ने पशुओं की उत्पादकता बढ़ाने के लिए क्या कदम उठाये हैं ? स्पष्ट करो।
- (3) हिमाचल में मछली पालन का महत्त्व बताते हुए, विभिन्न क्षेत्रों में मछली पालन की सम्भावनाओं पर प्रकाश डालिए।
- (4) हिमाचल सरकार मछली को प्रोत्साहन देने के लिए क्या प्रयास कर रही है ? समझाकर लिखो।

लघु-उत्तर प्रश्न

- (i) विभिन्न किस्म के पशु-धन की संख्या बताओ।
- (ii) पशुओं की बीमारियों की रोकथाम के लिए सरकार के प्रयासों का संक्षेप में वर्णन करो।
- (iii) देश में मछलियों की मांग स्पष्ट करते हुए हिमाचल की स्थिति पर प्रकाश डालो।
- (iv) पशु आहार व चरागाहों के बारे में सरकार क्या कर रही है ? लिखो।
- (v) पशु-पालन की मुख्य समस्याएं क्या हैं ? स्पष्ट करो।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

रिक्त स्थान भरो

- (i) गऊओं में दोगली जाति के प्रजनन के लिए नस्ल को अच्छा माना है।
- (ii) पशुओं की सबसे बड़ी छूत की बीमारी है।
- (iii) राज्य में दूध का उत्पादन टन प्रति वर्ष है।
- (iv) गोबिन्द सागर में प्रति हैक्टेयर जल क्षेत्र में कि०गा० मछली पकड़ी जाती है।
- (v) राज्य में मछलियों का उत्पादन मी० टन है।

सही (✓) व गलत (x) के चिन्ह लगाओ।

- (i) हिमाचल प्रदेश में पशुओं की संख्या मनुष्यों की संख्या से अधिक है।
- (ii) ऊंचे व ठण्डे भागों में पशु-पालन ही मुख्य व्यवसाय है।
- (iii) भेड़ों की नस्ल सुधारने के लिए मैरीनों नस्ल से प्रजनन कराया जा रहा है।
- (iv) मछली उत्पादन के विपणन का कार्य सहकारी समितियां कर रही हैं।
- (v) हिमाचल प्रदेश में जलाशयों में से अधिक मछली नहीं पकड़ी जाती है।

